लोकविज्ञान

विज्ञान समिति, उदयपुर

अगस्त 2015

वैज्ञानिक प्रगति का आधार : न्यूट्रिनो टेक्नोलोजी

विख्यात स्विस वैज्ञानिक वोल्फगांग पॉली ने 1930 में कहा था कि न्यूट्रिनो ब्रह्मांड में फोटॉन यानी प्रकाश कणों के बाद दूसरे सबसे ज्यादा पाए जाने वाले कण हैं। हर सेकंड हमारे सामने से 100 खरब न्यूट्रिनो निकल जाते हैं। यही वजह है कि इंडियन न्यूट्रिनों ऑब्जर्वेटरी (आईएनओ) को धरती में 1300 फीट की गहराई पर स्थापित करना होगा ताकि इसे वातावरण के खरबों खरब न्यूट्रिनो से दूर रखा जा सके। अन्यथा जमीन पर लगे न्यूट्रिनो डिटेक्टर को तो न्यूट्रिनो की इतनी संख्या जाम ही कर देगी । न्यूट्रिनो हमेशा रहे हैं, क्योंकि ये 14 अरब साल पुराने हैं और हमारे ब्रह्मांड की आयु भी इतनी ही है।

वैज्ञानिक व प्रौद्योगिक प्रगति के लिए न्यूट्रिनों बहुत अहम हैं। एक - वे बहुत बड़ी मात्रा में मौजूद हैं। दो- उनका मास बहुत कम है व इन पर इलेक्ट्रॉन-प्रोटोन की तरह कोई आवेश यानी चार्ज नहीं है। इस कारण वे ग्रहों, तारों, चट्टानों यहां तक कि मानव शरीर में से भी बिना कोई संबंध बनाए गुजर सकते हैं। तीन- इनसे खगोलशास्त्र, खगोल भौतिकी, संचार और मेडिकल इमेजिंग में नए आयाम खुल सकते हैं।

न्यूट्रिनों रिसर्च में भारत अग्रणी रहा है। हमारी ऐसी पहली प्रयोगशाला 1960 के दशक में ही काम करने लगी थी। हमारे भौतिकविदों ने कर्नाटक में मौजूद सोने की खदान में न्यूट्रिनों रिसर्च प्रयोगशाला बनाई थी, जो तब दुनिया की सर्वाधिक गहराई में मौजूद प्रयोगशाला थी। खदान के नाम पर इसे कोलार गोल्ड फील्ड लैब कहा गया। 1965 में इसकी मदद से शोधकर्ताओं ने वातावरण में मौजूद न्यूट्रिनों का पता लगाया था । 1992 में खदान बंद होने के साथ प्रयोगशाला बंद कर दी गई ।

वर्ष 2011 में लेखकद्वय शिकागो से 60 किमी दूर स्थित फर्मी लैब की ज्यूट्रीनो स्टडी लैब गए थे। वहां मौजूद हर किसी के चेहरे पर ऐसी लैब होने का गर्व साफ झलक रहा था, जो ब्रह्माण्ड के कई रहस्य खोल सकती है। आईएनओ कुछ मामलों में फर्मी लैब से भी आगे की प्रयोगशाला होगी।

न्यूट्रिनो के बारे में जानकारी न होने से कुछ संदेह भी हैं। क्या न्यूट्रिनो से कैंसर होगा ? बिल्कुल नहीं ! क्योंकि वे ठोस चीजों से संपर्क ही नहीं करते। यदि न्यूट्रिनो लोहे की रॉड से गुजरे तो एक प्रकाश वर्ष की दूरी (9,460,730,477,580 किमी) चलने के बाद वे लोहे के किसी एक परमाणु के संपर्क में आएंगे। कहने की जरूरत नहीं कि दो मीटर से कम के मानव शरीर में न्यूट्रिनों से हानि होने की आशंका असंभव-सी है।

न्यूट्रॉन की तुलना में 'न्यूट्रिनो' 17 अरब गुना हल्के होते हैं। दोनों की कोई तुलना ही नहीं है। यह भी गलतफहमी है कि लैब में बने न्यूट्रिनो प्राकृतिक न्यूट्रिनो से ज्यादा खतरनाक है। न्यूट्रिनो तो मूलभूत कणों में से है और इसमें प्राकृतिक व कृत्रिम जैसा कुछ नहीं होता । इनसे परमाणु संयंत्रो पर दूर से निगरानी रखी जा सकती है जिससे परमाणु प्रसार का खतरा टाला जा सकेगा। यूरेनियम-238 से न्यूक्लियर ट्रांसम्युटेशन के जरिये प्लूटोनियम-239 बनाया जाता है। आतंकी इससे परमाणु बम बना सकते हैं। न्यूट्रिनो डिटेक्टर इसका पता लगाकर ऐसी कोशिश को नाकाम कर देंगे।

न्यूट्रिनो टेक्नोलॉजी से धरती की गहराई में मौजूद खनिज व तेल भंडारों का पता लग सकता है। न्यूट्रिनो जितनी दूरी तक यात्रा करते हैं और जितने पदार्थ में से गुजरते हैं, उनका 'फ्लेवर' उतना ही बदल जाता है। यह खनिज व तेल का पता लगाने के अलावा भूकंप की पूर्व चेतावनी देने में मददगार होगा। यह जियोन्यूट्रिनो का क्षेत्र है, जो 2005 के आस-पास पहली बार पाए गए थे। न्यूट्रिनो निगरानी केंद्रों में न्यूट्रिनो टोमोग्राफी यानी जियोन्यूट्रिनो के विश्लेषण से ऐसा डाटा मिल सकता है, जिसकी मदद से हम भूकंप पैदा करने वाली भूगर्भीय गतिविधियों का पता लगा सकते हैं। न्यूट्रिनो टॉवर, केबल और उपग्रहों की मदद से अधिक तेजी से डाटा भेज सकते हैं। इसमें ट्रांसमिशन लॉस नहीं होगा, क्योंकि न्यूट्रिनो अपने मार्ग में अन्य परमाणु से संपर्क ही नहीं करते। दूरसंचार व इंटरनेट में इससे नए आयाम खुलेंगे। कुछ वैज्ञानिकों का कहना है कि यदि दूसरे ग्रहों पर जीवन है तो वहां संपर्क के लिए न्यूट्रिनो सबसे तेज व भरोसेमंद माध्यम होगा।

सैंकड़ों-हजारों साल पहले होमो सैपियन्स (मानव) ने दो पत्थरों को रगड़कर आग पैदा की और धरती पर उसका प्रभुत्व हो गया। आज हम उस दहलीज पर खड़े हैं, जहां हम मूलभूत कणों को हमारे हिसाब से दिशा दे सकते हैं। यह ज्ञान हमें ब्रह्मांड पर प्रभुत्व दे सकता है।

डॉ. एपीजे अब्दुल कलाम एंव सृजनपाल सिंह
(साभार)

सम्पादन-संकलन प्रो. एन. एल. गुप्ता, श्री प्रकाश तातेड़, डॉ. के.एल. मेनारिया, डॉ. एल.एल. धाकड़, डॉ. के. एल. तोतावत

विज्ञान समिति, रोड़ नं. 17, अशोकनगर, उदयपुर - 313 001 दूरभाष : 0294-2413117, 2411650

Website : www.vigyansamitiudaipur.org, E-mail : samitivigyan@gmail.com

अपनी रक्षा खुद करते हैं जन्तु

यह सर्वज्ञात है कि एक जन्तु दूसरे जन्तु का भोजन है अतः हर जन्तु अपने शिकारी जन्तु से बचाव-छिपाव का कोई तरीका अपनाता है। जन्तुओं में भी हमारी तरह जीने की भरपूर इच्छा होती है। वे मरना नहीं चाहते, इसलिए सभी जन्तु अपनी रक्षा स्वयं करते हैं।

आत्मरक्षा का एक आसान तरीका अपने शरीर का रंग वातावरण के अनुसार बनाना है। इस कला में सांप, गिरगिट, मेंढक व अनेक प्रकार के कीट बहुत होशियार होते हैं। इनकी त्वचा में विभिन्न रंगों के कण पाये जाते हैं जो इनकी त्वचा का रंग आवास जैसा बना देते हैं। इसीलिए मेंढक हरे, मटमैले, काले रंगों के दिखाई देते हैं।

'स्टिक इन्सेक्ट' का शरीर लकड़ी की तीलीयों जैसा होता है। यह सूखी टहनी पर बैठा हो तो इसे पहचाना नहीं जा सकता । इसी प्रकार हरे रंग व पत्तीनुमा हरे पंख वाला 'लीफ इन्सेक्ट' हरी शाखा पर बैठ कर पत्ती जैसा लगने लगता है। वातावरण के अनुसार दिखाई पड़ने का यह गुण अनुहरण (Camouflage) कहलाता है।

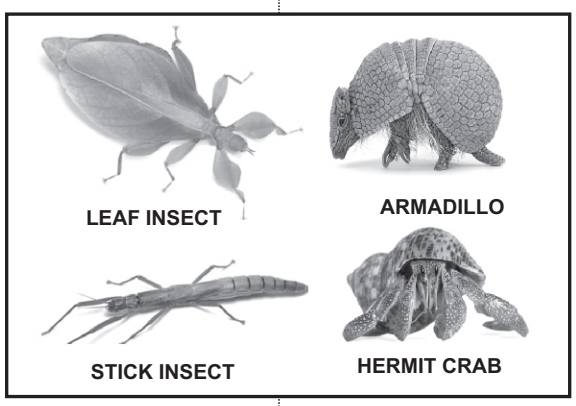

कीटों की अनेक किस्में समूह में रहती है। उनमें संपूर्ण समूह की सुरक्षा का भार सैनिकों या श्रमिकों पर होता है। चिंटियां, मधु-मक्खियां, दीमक इसी प्रकार के कीट है। चिंटियों की अपनी लम्बी सेनाएं होती है जो अन्य चिंटी-समूहों पर हमला करके उनके अंडों पर कब्जा कर लेती है। उनसे निकले बच्चों से गुलामों जैसे कार्य कराते हैं। दीमक के लम्बी नासिका वाले सैनिक जिन्हें नेस्यूट्स कहते हैं, ये अपने शत्रु से रासायनिक युद्ध लड़ते हैं। नेस्युट्स जो रासायनिक पदार्थ निकालते हैं, उसकी दुर्गन्ध से शत्रु भाग जाते हैं।

ऑक्टोपस, कटल फिश और स्क्विड प्रकार के समुद्री जन्तुओं में काली स्याही छोड़ने वाली 'ग्रंथियां' पायी जाती है। जब भी कोई शत्रु इनके पास आता है तो ये गहरी काली स्याही छोड़कर अंधेरा सा कर देते हैं और अंधेरे का लाभ उठाकर भाग जाते हैं। घरेलू छिपकली का आत्मरक्षा का तरीका इससे भी विचित्र है। जब कोई शत्रु छिपकली का पीछा करता है तो यह अपनी पूंछ छोड़ देती है। टूटी हुई पूंछ काफी देर तक तड़फती रहती है। शत्रु तड़फती पूंछ को देखता रह जाता है और छिपकली भागकर छिप जाती है। कुछ दिनों बाद छिपकली के पूंछ वापस आ जाती है।

हिप्पोकेम्पस जिसे घोड़ा मछली भी कहते हैं। इसका शरीर अन्य मछलियों की तरह मांसल नहीं होता । इसके सूखे शरीर को जन्तु नहीं खाते। सीपी, घोंघे व शंख जाति के जन्तुओं का शरीर कैल्सियम कार्बोनेट के कठोर कवच से ढका रहता है जिससे अन्य जन्तु इन्हें साबुत निगल नहीं पाते। मगरमच्छ व कछुए की कठोर शल्कयुक्त खाल ही उनकी रक्षा करती है। संकट के समय कछुआ अपना मुंह व पैर अपने कवच में छुपा लेता है। आर्मेडिल्लो तो अपने शरीर को गोल गेंद सा बना लेता है। इस प्रकार अनेक जन्तुओं में शरीर ही आत्मरक्षा का साधन बन जाता है।

आत्मरक्षा के उदाहरणों में 'हरमिट क्रेब' का उदाहरण रोचकता भरा है। एक जाति का केकड़ा घोंघे को पकड़कर खा जाता है और उसके खाली खोल को अपना घर बना लेता है। घोंघे के कठोर कवच में निवास करने से केकड़े की पूरी सुरक्षा हो जाती है। घोंघे के इस कवच पर कभी कभी सी-एनीमोन जन्तु भी डेरा जमा लेता है। तब इनका सम्मिलित रूप अन्य जन्तुओं के लिए डरावना हो जाता है किन्तु इससे केकड़े को शिकार पकड़ने में विशेष सुविधा हो जाती है। मेलिया टेस्सेलेटा नामक केकड़ा अपनी रक्षा के लिए प्रत्येक पंजे में एक रेड सी एनीमोन लेकर चलता है जो शत्रु के पीड़ादायक डंक मारता है।

सभी विषैले सांपो में आत्मरक्षा के लिए विष ग्रंथियां और विषदंत पाए जाते हैं। ऐसे सर्पों में कोबरा, क्रेत व वाइपर मुख्य है। ये छेड़ने पर या संकट के समय अपने विषदंतों से काटते हैं। इनका विष प्राण घातक होता है।बिच्छू के शरीर के अंतिम खंड में डंक पाया जाता है। मधुमक्खी, ततैया आदि कीटों में डंक ही आत्मरक्षा का साधन है। चिंटियां व मकोड़े भी काटकर अपनी रक्षा करते हैं। कुछ मछलियों में विद्युत अंग पाए जाते हैं जिनसे उत्पन्न विद्युत के झटकों से शत्रु घायल हो जाता है। इलेक्ट्रिक ईल, केट फिश व टारपीड़ो इस प्रकार की मछलियां है।

पक्षी प्रायः उड़कर ही अपनी रक्षा कर लेते हैं। शुतुरमुर्ग तेज दौड़कर अपनी जान बचाता है। हुदहुद पक्षी का तरीका जरा विचित्र है। यह अंडे देने के साथ ही अपनी बीटें भी घोंसले के अंदर ही करती है। इन बीटों की बदबू से शत्रु इसके घोंसले के पास नहीं आते।

स्तनधारी सर्वाधिक विकसित जन्तु है। इनमें आत्मरक्षा की समझ सूझबूझ पर आधारित होती है। चूहे, खरगोश और हिरण शाकाहारी जन्तु है। इन्हें हमेशा शत्रु का भय बना रहता है। अतः ये थोड़े सी आहट होते ही तेजी से भाग खड़े होते हैं। चूहे व खरगोश अपने बिल के एक से अधिक रास्ते बनाते हैं ताकि एक रास्ते पर शत्रु के आने पर ये दूसरे रास्तों से भाग जाते हैं। खरगोश के लम्बे कान आवाज सुनने के लिए एन्टीना का काम करते हैं। खरगोश शत्रु को देखकर अपने पिछले पैरों को जमीन पर जोर से पटकता है जिससे अन्य खरगोश सचेत होकर अपने बिलों में घुस जाते हैं। जंगली जानवरों को तो प्रकृति ने आत्मरक्षा के लिए पंजे, दांत, सींग आदि हथियार दिए ही है।

जन्तुओं में जीने की इच्छा कितनी बलवती होती है, इन उदाहरणों से स्पष्ट है। तब हमें भी चाहिये कि हम इन जन्तुओं को कभी भी मारे नहीं, सताये नहीं।

– प्रकाश तातेड़

लोकविज्ञान के पूर्व अंक से –
जून1964

कोकरोच : एक विचित्र जीव

अनेक जीव जन्तु इस संसार में आए और चले गए। महाद्वीपों ने स्थान बदले। उनमें और उन पर रहने वाले सभी प्राणियों में अनेक रूपान्तर हुए किन्तु तिलचट्टा नामक जन्तु 35 करोड़ वर्ष से अपने मूल रूप में अप्रभावित एवं अपरिवर्तित ही है। **यह इस भूमंडल का प्राचीनतम निवासी है।** इन्होंने राकीज, आल्पस और आप्लेशियन पर्वतों को बनते ओर उठते देखा। संसार के प्रत्येक भाग में देश, काल की बाधाओं से परे यह सर्वत्र विद्यमान है।इस धरती के गर्भ में जब खनिज तेलों एवं कोयलों का निर्माण प्रारम्भ भी नहीं हुआ था उस समय यह जन्तु एक लम्बी उम्र बिता चुका था।

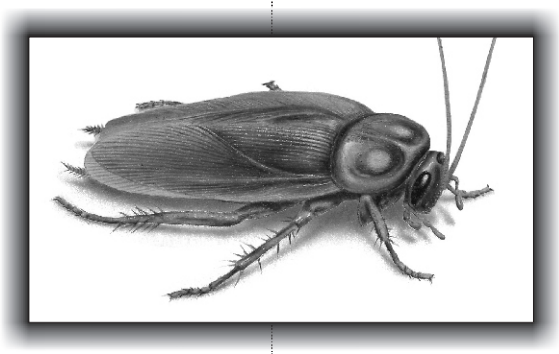

इसने ही अपने जन्म के करोड़ों वर्षों पश्चात् मनुष्य का इस धरती पर आगमन देखा। किन्तु कोकरोच के द्वारा अस्तित्व को अक्षुण्ण बनाने के लिए अर्जित ज्ञान और परिस्थितियों के अनुकूल ढालने की उसकी क्षमता देखकर दांतों तले अंगुली दबानी पड़ती है। यह एक जीवित जीवाश्म(Fossil) है जिसमें विविध विचित्रताएं हैं। निवास की कोई कठिनाई नहीं है। इसकी विभिन्न ज्ञात 2500 जातियों में से केवल एक प्रतिशत हमारे मकानों में रहना पसन्द करती है जबकि अन्य सभी दूसरे स्थानों, जंगलों आदि में रहना पसन्द करती हैं।

कोकरोच के अुक्षण्ण अस्तित्व का एक कारण इसकी स्वादेन्दिग्र है। यह किसी भी फूल और पौधे को खा लेता है। फूल और पौधे को भी क्या, यह किसी भी वस्तु खा लेता है। जूतों के चमड़े से लेकर, वार्निश, कपड़े और साबुन, मोम और पेराफीन तक को यह चट कर जाता है। दूध और शराब जैसे पेय पदार्थो को बड़े चाव से पीता है। स्वयं के शरीर से उतरी हुई खाल को खाता है, कठिनाई में अपनी ही जाति के अंडे भी इसकी भोज्य सामग्री बन जाते हैं।

भूखा और प्यासा रहने की शक्ति तो इसमें इतनी गजब की है जितनी शायद ही किसी अन्य प्राणी में होती होगी। जल तथा खाद्य सामग्री के बिना यह एक महीने तक जीवित रह सकता है। दो महीने तक यह केवल जल पीकर तथा पांच महीने तक केवल सूखे भोजन पर निर्भर रह सकता है।

अपनी दुर्गन्ध के कारण यह मलिन जन्तु समझा जाता है किन्तु इसी गंध का प्रभाव है कि कितने ही अन्य जीव जन्तु जो इसे खा सकते हैं और खा सकते थे, नहीं खाते हैं। गंध इस प्रकार कोकरोच के लिए सुरक्षा साधन है। यह अपने अंगों को घन्टों तक पानी से धोया करता है।

इनका आकार अलग-अलग होता है। कुछ जाति के कोकरोच चावल के दाने से भी छोटे होते हैं जबकि अन्य जन्तु 2.5 इंच लम्बे होते हैं तथा इनके पंख 7 इंच तक के होते हैं। इनका रंग भी विविधताओं से भरपूर है। कुछ चमकीले काले रंग के होते हैं। अधिकतर ये भूरे रंग के होते हैं। किन्तु इंद्रधनुष के चमकीले रंगों वाले जन्तुओं की भी कमी नहीं है। इसके पंख होते हैं जिनका उपयोग आपत्तिकाल में होता है, अर्थात भागने के अन्य रास्तों के अभाव में यह पंखों का प्रयोग करता है। मुख्यतया इसके मजबूत छः पांवों का उपयोग होता है। इसके दो स्पर्श अंग होते हैं। इसके अत्यधिक महत्वपूर्ण अंगों में से ये स्पर्श अंग भी हैं। ये अंधेरे में इसे मार्ग ढूंढने में मदद करते हैं। जल और खाद्य सामग्री के ढूंढने में मदद देते हैं। स्पर्श अंग ध्वनि तरंगों को ग्रहण कर खतरे की संभाव्यता से पूर्व परिचित कर देते हैं। इन्हीं स्पर्श अंगो से मादा के स्पर्श अंगों पर आघात कर उसे सहवास के लिए उत्तेजित करता है। इसकी निशाचरी आदतें इसे सुरक्षित रहने में अत्यधिक मदद करती हैं। रात्रि के अंधकार में यह अनेक शत्रुओं से बचा रहता है इसके दो तीक्ष्ण संयुक्त और तीन साधारण आंखे होती हैं। इसकी दृष्टि बड़ी पैनी और विस्तृत होती है। अंधे होने पर भी इसे प्रकाश की चेतना रहती है। प्रकाश होने पर तत्काल इधर-उधर भागने की सुध हो जाती है जिससे यह अपना बचाव कर लेता है।

कोकरोच अपने जन्म के 24 घंटे पश्चात् ही अपनी वंश वृद्धि में लग जाता है। 303 दिन में एक मादा ने 160 तक बच्चों को जन्म देने का उदाहरण प्रस्तुत किया है। इन बच्चों का एक महीने में विकास होता है।

इस जन्तु पर सभी जन्तु नाशक दवाइयों का प्रयोग किया गया किन्तु जन्तु नाशक दवाइयां असरहीन रही। इससे बचने का एक मात्र उपाय है स्वच्छता।

अनुवादक- श्री सुरेशचंद्र मेहता

माइंडफुल ईटिंग

भोजन अगर हम हाथ से खाते हैं तो भोजन को मिलाने और खाने को मुंह तक ले जाने के लिए ध्यान केंद्रित करना पड़ता है। इस प्रक्रिया को मांइडफुल इटिंग कहते हैं। मांइडफुल इटिंग के कई फायदे हैं जिसमें भोजन के पोषक तत्त्व बढ़ जाते हैं, पाचनक्रिया सुधरती है, आंतो पर जोर कम पड़ता है। इससे कब्ज, अपच व बदहजमी जैसी परेशानी नहीं होती है। जब हम हाथ से खाना शुरू करते हैं तो छूते ही इसका अहसास हो जाता है और हमारे संकेतों को दिमाग से पेट को उपयुक्त पाचन रस स्रावित करने के लिए संकेत भेजते हैं, इससे खाना सरलता से पच जाता है और हमें पेट सम्बन्धित परेशानियों से छुटकारा मिल जाता है। मांइडफुल इटिंग से मोटापा भी नियंत्रित रहता है तथा आई.बी.एस.(inflammatory bowel syndrome) की सम्भावनाएं भी कम हो जाती है।

दरअसल हाथ से खाना खाने को लेकर अलग-अलग धारणाएं हैं। हाथ से खाना खाने के लिए जब अंगुलियां व अंगूठे को मिलाया जाता है तो मुद्रा बनती है, उससे हमारे शरीर को स्वस्थ रखने की क्षमता है। यह भी माना जाता है कि हमारा शरीर जिन पंच महाभूतों (पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु व आकाश) से बना है, वे सब हमारे हाथ की पांचों अंगुलियों में विद्यमान है। इस तरह जब हम हाथ से खाना खाते हैं तो कौर या बाइट बनाने के लिए इन सभी पंच महाभूतों को एकजुट करते हैं, इससे भोजन ऊर्जादायक बन जाता है। खाने में रस भी आता है।

- डॉ. आई एल. जैन

डॉ. डी.एस. कोठारी विज्ञान चेतना अभियान का आयोजन

प्रायोजक : डॉ. यशवन्त कोठारी चेरिटेबल पब्लिक ट्रस्ट, उदयपुर

विश्वविख्यात वैज्ञानिक पद्मविभूषण डॉ. दौलत सिंह कोठारी का जन्म 6 जुलाई 1906 को उदयपुर नगर में हुआ था। डॉ. कोठारी ने एस्ट्रोफिजिक्स में विश्वस्तरीय अनुसंधान कर भारत का गौरव बढ़ाया।

इस महान वैज्ञानिक की स्मृति में विज्ञान समिति द्वारा विगत वर्षो की श्रृंखला में इस वर्ष निम्नांकित चार प्रतियोगिताएं दिनांक 15 अक्टूबर 2015 को आयोजित है- 1.डॉ. डी.एस. कोठारी जीवन वृत्त प्रश्नोत्तरी 2. विज्ञान प्रयोग प्रदर्शन 3.विज्ञान विषयक आशुभाषण 4. प्रादर्श परीक्षण । पूर्ण जानकारी के लिए विज्ञान समिति के फोन पर संपर्क करें।

इस हेतु छात्रों का पंजीयन 10.10.2015 तक पत्र भेजकर कराना अनिवार्य है। प्रतियोगिताओं में प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय पुरस्कार विजेताओं को समुचित

मैडम क्यूरी : प्रतिभा व संघर्ष का अद्भुत उदाहरण

- नोबल पुरस्कार प्राप्त प्रथम महिला और दो बार नोबल पुरस्कार विजेता प्रथम व्यक्ति, ये दो विश्व कीर्तिमान मैडम क्यूरी की विलक्षण प्रतिभा के ठोस प्रमाण है।
- मेडम क्यूरी का जन्म नाम मारिया सालोमिया स्क्लोडोवस्का (Maria Salomea Sklodowaska)।
- 7 नवम्बर 1867 को पौलेण्ड के वारसा शहर के एक निर्धन परिवार में जन्म।
- अभावग्रस्त जीवन में साहस व संघर्ष द्वारा पेरिस (फ्रांस) जाकर भौतिक विज्ञान में एम.एससी. का अध्ययन एवं शोध कार्य का शुभारंभ।
- शोध के दौरान पियरे क्यूरी से भेंट । विवाहोपरान्त फ्रांस की नागरिकता।
- जुलाई 1898 में मैडम क्यूरी द्वारा एक नए तत्व 'पोलोनियम' की खोज।
- दिसम्बर 1898 में क्यूरी दम्पति द्वारा रेडियम की खोज।
- 1903 में भौतिक विज्ञान का नोबल पुरस्कार क्यूरी दम्पत्ति एवं हेनरी बेकरल को विकिरण के क्षेत्र में असाधारण अनुसंधान पर।
- पोलोनियम एवं रेडियम को अलग करने में सफलता पर मैडम क्यूरी को 1911 में रसायन विज्ञान का नोबल पुरस्कार प्रदत्त।
- मैडम क्यूरी द्वारा रेडियम शोध संस्थान की स्थापना । इसी संस्थान में कार्यरत मैडम क्यूरी की पुत्री व दामाद को भी नोबल पुरस्कार प्राप्त।
- विश्व में एक परिवार द्वारा पांच नोबल पुरस्कार प्राप्त करना अब तक का दुर्लभ एवं अद्भुत प्रसंग।
- बचपन में आर्थिक अभाव, युवावस्था में महिला होने के कारण उचित स्थान पाने के लिए संघर्ष, प्रौढ़ावस्था में पति की सड़क दुर्घटना में आकस्मिक निधन की वेदना।
- 4 जुलाई 1934 को रेडियम विकिरण जनित एनीमिया के कारण इस महान वैज्ञानिक का बलिदान हो गया । मानवता उन्हें सदैव सर-आंखों पर रखेगी।

प्रसंग

विज्ञान समिति परिसार के बड़े सभागार का नामकरण सम्प्रति "मैडम क्यूरी सभागार" करने का प्रस्ताव विज्ञान समिति कार्यकारिणी द्वारा दि. 28 अगस्त 2015 की बैठक में स्वीकार किया गया।

सौजन्य : श्रीमती प्रेमलता जैन एवं डॉ. आई.एल. जैन
30, न्यू अरिहंत नगर, कालका माता रोड़, पहाड़ा, युनिवर्सिटी रोड़, उदयपुर मो. : 9414168660